International Journal of Advanced Research in Arts, Science, Engineering & Management (IJARASEM)

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Peer Reviewed & Referred Journal |

| Volume 8, Issue 6, November 2021 |

रामधारी सिंह दिनकर के काव्य में राष्ट्रीय चेतना के विविध स्वर

Gurmit Singh

Associate Professor in Dept. of Hindi, Govt. College, Bundi, Rajasthan, India

सार

दिनकर जी के यहाँ राष्ट्रीय चेतना कई स्तरों पर व्यक्त हुई है। हुंकार, रेणुका, इतिहास के आँसू जैसी कविताओं में दिनकर जी ने विद्रोह और विप्लव के स्वर को उभारा है। इनमें कर्म, उत्साह, पौरुष एवं उत्तेजना का संचार है। यह सब तत्कालीन राष्ट्रीय आंदोलन की प्रगति के लिये अत्यंत सहायक सिद्ध हुआ। आधुनिक युग में हिन्दी काव्य में पौरुष का प्रतीक और राष्ट्र की आत्मा का गौरव गायक जिस कवि को माना गया है, उसी का नाम रामधारी सिंह 'दिनकर' है। वाणी में ओज, लेखनी में तेज और भाषा में अबाध प्रवाह उनके साहित्य में देखा जा सकता है। 'दिनकर' का जन्म बिहार के सिमिरिया घाट स्थान पर 30 सितम्बर, 1908 को हुआ। मुंगेर जिले में यह छोटा-सा ग्राम है। इनके पिता का नाम श्री रविसिंह था। कविवर दिनकर ने काव्य-क्षेत्र में 'कुरुक्षेत्र' और 'उर्वशी' जैसी महान् कृतियाँ देने के अतिरिक्त 'रेणुका', 'रसवन्ती', 'सामधेनी', 'बापू', 'रश्मि-रथी', 'द्वन्द्वगीत', 'नील कुसुम', 'परशुराम की प्रतीक्षा', 'आत्मा की आँखें' आदि अनेक कृतियाँ प्रदान की हैं। सन् 1959 में 'पद्मभूषण' की उपाधि से विभूषित हुए। इन्हें 'संस्कृति के चार अध्याय' ग्रन्थ पर साहित्य अकादमी से पाँच हजार का पुरस्कार प्राप्त हुआ। सन् 1972 में 'उर्वशी' कृति पर इन्हें ज्ञानपीठ पुरस्कार दिया गया।

परिचय

संस्कृत के अनुसार 'राष्ट्र' में 'ध' प्रत्यय के योग से 'राष्ट्रीय' शब्द बनता है। 'राष्ट्र' शब्द से 'राष्ट्रीय' और 'राष्ट्रीय' से 'राष्ट्रीयता' शब्द की संरचना हुई है। राष्ट्र विशेष के गुणों या राष्ट्र के प्रति विशिष्ट प्रेम को राष्ट्रीयता की संज्ञा दी जा सकती है। इस प्रकार राष्ट्रीयता राष्ट्र विशेष की आत्म-चेतना है। राष्ट्रीयता के अन्तर्गत राष्ट्र या देश के प्रति व्यक्ति का संवेदनशील घनिष्ठ संबंध होता है। राष्ट्रीयता मनुष्य की सहज और स्वाभाविक वृत्तियों में से एक है[1], जिसके आधार पर वह अपने देश के प्रति आत्मीय लगाव का अनुभव करता है। वह अपने देश को समुन्नत, विकसित और गतिशील बनाने के लिए सदैव उत्सुक रहता है। इसी भावावेश में वह राष्ट्र की रक्षा, कल्याण और विकास के लिए सर्वस्व न्योछावर करते हुए अपना गौरव समझता है। यह निर्विवाद सत्य है कि जब व्यक्ति 'स्व' की परिधि से बाहर आकर सामाजिक संदर्भ में धार्मिक जातीय और धार्मिक संस्पर्श करता हुआ राष्ट्रीयता के विशाल परिवेश में पहुँचता है, तो उसमें दिव्य और आदर्श भाव विकसित हो जाते हैं। राष्ट्र-प्रेम मानव में राष्ट्र के समाज, प्रकृति, उसकी संस्कृति, उन्नति और विकास के प्रति भावात्मक लगाव उत्पन्न करता है।[2] राष्ट्र-प्रेम मानव-मन में उत्साह, त्याग और उत्सर्ग का अपूर्व भाव भरता है। सच्चा राष्ट्र-प्रेम आत्मा के दिव्य भाव का साक्षात्कार करता है, जिससे देश के समस्त मानव, पशु-पक्षी और प्रकृति से आत्मीय लगाव का अनुभव करते हैं। राष्ट्र-प्रेम की मनमोहक छाया में पहुँचकर मानव के मन का भावात्मक विकास भूत, वर्तमान से लेकर भविष्यत तक हो जाता है। राष्ट्र-प्रेम में स्वदेश के प्रति आदर और सम्मान का भाव होता है। इसी तथ्य को स्पष्ट करते हुए बाबू गुलाबराय ने कहा है- किसी विशिष्ट भौगोलिक इकाई के जनसमुदाय के पारस्परिक सहयोग और उन्नति की अभिलाषा से प्रेरित, उस भू-भाग के लिए प्रेम और गर्व की भावना को 'राष्ट्रीयता' कहते हैं। वस्तुत: राष्ट्रीयता एक अनूठी भाव-धारा है, जिसमें राष्ट्र के सूक्ष्म और स्थूल दो तथ्यों के प्रति उत्तरोत्तर लगाव दिखाई देता है। राष्ट्रीयता के स्थूल तथ्यों में भौगोलिक और प्राकृतिक संदर्भ आते हैं, तो सूक्ष्म तथ्यों में सांस्कृतिक, धार्मिक, दार्शनिक, आध्यात्मिक, ऐतिहासिक, सामाजिक, राजनीतिक, साहित्यिक, कलात्मक, भाषायी चेतना आती है।[1]

राष्ट्रीयता के संदर्भ में राष्ट्र की भौगोलिक सीमा के प्रति निष्ठा होना प्राथमिक आधार है। भौगोलिक सीमा राष्ट्र की भूमि और उसकी पहचान निर्धारित करती है। भूमि विषयक देश-प्रेम मनुष्य में राष्ट्रीयता की पावन चेतना का

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Peer Reviewed & Referred Journal |

| Volume 8, Issue 6, November 2021 |

आधार सिद्ध होता है। भू-भाग के आधार पर ही समस्त जन-समूह के प्रति सहज स्नेहिल भाव उभरता है। यदि भूमि की विभिन्न वस्तुओं के प्रति लगाव बढ़ता है तो प्रकृति से उदात्त तत्त्वों का विकास होता है। संस्कृति की भाव-तरंगिणी राष्ट्र की अनुप्रेरक आत्मशक्ति है। वस्तुत: संस्कृति राष्ट्र को महिमा मंडित करने वाली आत्मशक्ति है। मनुष्य का संस्कारित आदर्श विचार उसे मानवतावादी धरातल पर पहुँचा देता है और फिर अनुकरणीय राष्ट्रीयता का विकास होता है। संस्कृति के अन्तर्गत आदर्श, परम्पराएँ, रीति-रिवाज, साहित्य, संगीत और कला की बलवती भूमिका होती है। राष्ट्रीयता के लिए सांस्कृतिक एकता-अनिवार्य तत्त्व है और इसके विद्यमान रहने पर ही राष्ट्र में एकता की भावना जागृत होती है।[3] राष्ट्रीय चेतना में धार्मिकता की बलवती भूमिका होती है। राष्ट्रीयता में व्यक्ति राष्ट्र की गौरव-गरिमा की रक्षा के लिए समर्पित होने के लिए तत्पर रहता है। राष्ट्रीय चेतना को जागृत करने में ऐतिहासिक संदर्भों की महती भूमिका होती है। देश के निर्माण में ऋषि, मुनियों, महात्माओं, मनीषियों के चिंतन और गतिशीलता का विशेष योगदान होता है। अतीत की गौरव-गाथा से जन-मन को सन्मार्ग पर गतिशील रहने की प्रेरणा मिलती है। निश्चय ही, राष्ट्रीय चेतना में राष्ट्र की स्वतंत्रता, अखंडता और एकता की पावन-त्रिवेणी का प्रवाह होता है।

'चेतना' शब्द अंग्रेजी शब्द कानशियसनेस का हिन्दी पर्यायवाची है। डॉ. रामप्रसाद त्रिपाठी ने चेतना को विवेकपूर्ण वैचारिकी माना है।[4]

विचार-विमर्श

दिनकर जी का अधिकांश साहित्य राष्ट्रीय चेतना से ओतप्रोत है। चीन से युद्ध के दिनों में 'दिनकर' की 'परशुराम की प्रतीक्षा' कविता अत्यन्त प्रसिद्ध हुई। इस कविता में देश के सैनिकों को अहिंसा त्यागकर पौरुष बनने का आह्वान किया गया है। सन् 1962 के चीनी-भारतीय-युद्ध के समय कविवर 'दिनकर' ने 'परशुराम[2] की प्रतीक्षा' कविता में देश के पौरुष को जागृत करते हुए सिंह गर्जना की थी–

वैराग्य छोड़ बाहों की विभा संभालो,
चट्टानों की छाती से दूध निकालो।
है रुकी जहाँ भी धार, शिलाएँ तोड़ो,
पीयूष चन्द्रमाओं को पकड़ निचोड़ो।
चढ़ तुंग शैल शिखरों पर सोम पियो रे,
योगियों नहीं, विजयी के सदृश जियो रे।
(परशुराम की प्रतीक्षा)

'दिनकर' अपनी काव्य-चेतना के बारे में लिखते हैं-

क्रांति-धात्रि कविते! उठ अंबर में आग लगा दे।
पतन, पाप, पाखंड जले, जग में ऐसी ज्वाला सुलगा दे।

'दिनकर' प्रेम, राष्ट्रीयता, मानवता और क्रांति के गायक हैं। उनकी कविता में राष्ट्र-व्यापी जागरण का स्वर है।[13] एक ओर वे अपने अतीत से प्रभावित हैं तो दूसरी ओर वर्तमान की अधोगति से क्षुब्ध। प्राचीन गौरव के प्रति उनके मन में अगाध श्रद्धा है। दिनकर की कविता में दीन, दु:खी और दलितों के प्रति सहानुभूति एवं संवेदना भी है। उन्होंने श्रमिकों और कृषकों के दयनीय जीवन का मार्मिक अंकन किया है। निम्न पंक्तियों में उनकी सहानुभूति एवं संवेदना द्रष्टव्य है-

आहें उठो दीन कृषकों की।
मजदूरों की तड़प पुकारें।
अरी गरीबी के लोहू पर,
खड़ी हुई तेरी दीवारें.....।

कवि ने हिमालय का मानवीकरण किया है। वास्तव में, कवि हिमालय के माध्यम से भारतीयों को संबोधित करते हुए कहते हैं-

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Peer Reviewed & Referred Journal |

| Volume 8, Issue 6, November 2021 |

ओ, मौन तपस्वी-लीन यती।
पत भर को तो कर दृगोन्मेष।
रे ज्वालाओं से दग्ध, विकल
है तड़प रहा पद पर स्वदेश
सुख-सिन्धु, पंचनद, ब्रह्मपुत्र,
गंगा, यमुना की अमिट-धार,
जिस पुण्यभूमि की ओर बही,
तेरी विगलित करुणा उदार।
(हिमालय)

कविवर दिनकर कहते हैं- हे हिमालय, देश के कितने वीर पुरुष रूपी रत्न हमसे छिन गए, जो स्वतंत्रता की चिनगारी जलाए रहे। भारत का अनंत वैभव चला गया। हिमालय समाधिस्थ होकर साधना ही करता रहा[13] और प्यारा देश भारत इन वीर रत्नों से रहित हो गया। महाभारत काल में दुःशासन ने केवल एक द्रौपदी के बाल खींच लिये थे, जिसके कारण महाभारत के भयंकर युद्ध की योजना बनाई गई और आज न जाने कितनी स्त्रियों के सतीत्व को लूटा जा रहा है और कितनी कन्याओं का अपहरण हो रहा है, किन्तु फिर भी किसी के मन में पीड़ा नहीं कि इन अत्याचारों का प्रतिरोध किया जाए। चित्तौड़ से पूछो कि जरा-सा अत्याचार होने पर या किसी नारी की ओर किसी की कुदृष्टि होने पर बड़े-बड़े संग्राम रचे गए और नारियाँ जौहर व्रत करके जीते-जी अपने प्राणों की बलि दे दिया करती थीं।[5] कवि ने इसी पीड़ा को निम्न शब्दों में प्रकट किया है –

कितनी मणियाँ लुट गई? मिटा
कितना मेरा वैभव अशेष।
तू ध्यान-मग्न ही रहा, इधर
वीरान हुआ प्यारा स्वदेश।
कितनी द्रौपदियौं के बल खुले?
किन-किन कलियों का अंत हुआ?
कह हृदय खोल चित्तौड़! यहाँ
कितने दिन ज्वाल-बसंत हुआ?

(हिमालय)

हिमालय का गौरव-गान करके देशोद्धार की प्रेरणा देते हुए कवि भारत के अतीत वैभव और वीर भाव को जगाना चाहता है। कवि हिमालय को संबोधित करके कहता है कि हे हिमालय![12] आज इस समय हमें अर्जुन और भीम तथा उनके क्रमशः गांडीव धनुष और गदा की आवश्यकता है। उन्हें लौटा दे। आज युद्ध में पूर्ण पराक्रम दिखाकर शत्रु पर विजय प्राप्त करने वाले योद्धाओं की आवश्यकता है। कवि शंकर के आवास-स्थल हिमालय से प्रार्थना करता है कि तू शिवजी से प्रार्थना कर कि वे पुनः एक बार तांडव नृत्य करें जिससे सारे भारत में 'हर-हर', 'बम-बम' की ध्वनि गूँज उठे जिसकी अंगड़ाई लेकर सारी भूमि काँप उठे अर्थात् सर्वत्र भयंकर हलचल मच जाए।[6] यथा-

रे रोक युधिष्ठिर को न यहाँ,
जाने दे उनकी स्वर्ग धीर,
पर, फिरा हमें गांडीव-गदा,
लौटा दे अर्जुन-भीम वीर।
कह दे शंकर से, आज करें,
के प्रलय-नृत्य फिर एक बार।
सारे भारत में गूँज उठे,
हर-हर, बम-बम का फिर महोच्चार।
(हिमालय)

कवि देश के लोगों को जागृत करते हुए कहता है कि लक्ष्य पास आ जाने पर थक कर बैठ जाना उचित नहीं है –

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Peer Reviewed & Referred Journal |

| Volume 8, Issue 6, November 2021 |

दिशा दीप्त हो उठी प्राप्त कर पुण्य-प्रकाश तुम्हारा।
लिखा जा चुका अनल-अक्षरों में इतिहास तुम्हारा।
जिस मिट्टी ने लहू पिया, वह फूल खिलायेगी ही,
अम्बर पर धन बन छाएगा ही उच्छवास तुम्हारा।
और अधिक ले जाँच, देवता इतना क्रूरर नहीं है,
थककर बैठ गये क्यों भाई! मंजिल दूर नहीं है।
(आशा का दीपक)

उक्त कविता का आशय यह है कि- जिस भारत भूमि की स्वतंत्रता के लिए इतने बलिदान हुए, उसमें स्वतंत्रता का फूल खिलकर ही रहेगा। यह आशा अवश्य फलवती होगी। हमारी पीड़ा जन्य साँसें आकाश में बादल बनकर अवश्य छायेगी जिससे स्वतंत्रता के रूप में सुखों की वर्षा होगी।[7] हे भाई, अब लक्ष्य निकट ही है, अत: थक कर मत बैठो। तुम साधना-श्रम करो जिससे तुम शीघ्र लक्ष्य की प्राप्ति कर सको।[11]

'आग की भीख' कविता में देश की दयनीय स्थिति का चित्रण करते हुए भगवान से स्वदेश के हित वरदान की भीख माँगता है[8] कि उसके देश की सारी बुराइयाँ दूर हो जायें–

मन की बंधी उमंगें असहाय जल रही हैं,
अरमान-आरजू की लाशें निकल रही हैं।
भीगी-खुली पलों में रातें पुकारते हैं।
सोती वसुंधरा जब, तुझको पुकारते हैं।
इनके लिए कहीं से निर्भीक तेज ला दे,
पिघले हुए अनल कर इनको अमृत पिला दे।
उन्माद, बेकली का उत्थान माँगता हूँ,
विस्फोट माँगता हूँ, तूफान माँगता हूँ।

अर्थात् हे प्रभु! देश के युवकों के हृदयों में हिलोरे ले रही उमंगें साधनों के अभाव में व्यर्थ जल रही हैं। उनके मन की इच्छाओं और तमन्नाओं का जनाजा निकल रहा है। आँखों से निकले आँसुओं के कारण भीगी और खुली आँखों के साथ पल-पल गिनकर रातें काट देते हैं। जब सारी धरती सुखपूर्वक सो रही होती हैं तो ये निराश युवक सहायता के लिए तुझे पुकारते हैं। हे प्रभु! तू इन युवकों के हृदय में निर्भीक तेज का संचार कर दे।[9]

कविवर दिनकर ने ओजस्वी शब्दों में राष्ट्रीय चेतना के संदर्भ में अतीत का गौरव-गान किया है। 'रेणुका' में संकलित 'हिमालय' कविता में वे कहते हैं–

तू पूछ अवध से, राम कहाँ? वृंदा घनश्याम कहाँ?
ओ मगध! कहाँ मेरे अशोक? वह चन्द्रगुप्त बलधाम कहाँ?
री कपिलवस्तु! कह बुद्ध देव के ये मंगल उपदेश कहाँ?
तिब्बत, इरान, जापान, चीन तक गये हुए संदेश कहाँ?

वस्तुत: कविवर 'दिनकर' संवेदनशील कवि हैं। उनका अधिकांश साहित्य राष्ट्रीय चेतना से ओतप्रोत है। उन्होंने सामाजिक उत्थान-पतन और आंदोलन से प्रभावित होकर काव्य-सृजन किया है। देश पर जब-जब संकट के बादल घिरते हैं, मानव-जीवन संघर्ष में जूझने लगता है, तब तब 'दिनकर' की कविता जन-मानस में ऊर्जा का संचार करती है। उनकी कविता देश की संस्कृति, सभ्यता, भाषा, परम्परा और आदर्श आदि की अनूठी एकता की आधारभूमि प्रस्तुत करती है।[10]

परिणाम

राष्ट्रकवि दिनकर की चेतना महान है, वे संवेदनाओं एवं संचेतनाओं के साहित्यकार हैं। भारतीय संस्कृति और अस्मिता की जमीन से जुड़े साहित्यकार हैं, दिनकर जी। उनके काव्य ने समय-समय पर भारतीय युग चेतना को राष्ट्र की अस्मिता क प्रति उद्वेलित किया है। मन मानस को राष्ट्रीयता से आपूरित किया है। एतदर्थ राष्ट्रकवि दिनकर का काव्य प्रासंकितापूर्ण है और यह प्रासंगिकता युग-युग का प्रतिनिधित्व करती

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Peer Reviewed & Referred Journal |

| Volume 8, Issue 6, November 2021 |

है।[9] इसलिए राष्ट्रकवि दिनकर हिन्दी साहित्य-संसार में अमर है उनका काव्य भारतीय संस्कृति-भारतीयता से परिचित कराता है उनकी दृष्टि में भारत एक भू-खण्ड मात्र नहीं है। एक विचारधारा है जो भारतीयता से अंगीकृत है। उन्हीं के शब्दों में -

‘‘**भारत नहीं स्थान का वाचक, गुण विशेष नर का है,**
एक देश का नहीं, शील यह भू-मण्डल भर का है।
जहाँ कहीं एकता अखण्डित, जहाँ प्रेम का स्वर है,
देश-देश मे वहाँ खड़ा, भारत जीवित भास्वर है।’’

कवि अपने युग का प्रतिनिधित्व करता है। किसी भी कवि के व्यक्तित्व एवं कृतित्व में युग प्रतिबिम्बित होता है। स्वयं कवि ने स्वीकार किया है -
‘कवि मानवता का वह चेतन यंत्र है जिस पर प्रत्येक भावना अपनी तरंग उत्पन्न करती है। जैसे भूकम्प मापक यंत्र से पृथ्वी के अंग में कहीं भी उठने वाली सिहरन आप से आप अंकित हो जाती है।’[11]
धर्मपाल सिंह कहते हैं कि – “कवि ने जब काव्य जगत में प्रवेश किया उस समय भारतीय राजनीति हलचल के दौर से गुजर रही थी। भारत अंग्रेजों का गुलाम था। इन परिस्थितियों ने ही कवि के रूप में दिनकर जी को विशेष ख्याति प्रदान की। कवि ने अपने युग को बड़ी ईमानदारी से सशक्त स्वर में वाणी दी है।” डॉ. गोपाल राय सत्यकाम दिनकर के एक और पक्ष की ओर ध्यान दिलाते हैं – “देश के स्वाधीन होने के समय दिनकर हिन्दी के एक प्रमुख और प्रतिष्ठित कवि थे, और वे ऐसे कवि थे जिनकी कविता राष्ट्रीयता आन्दोलन की समसामयिक गतिविधियों से अभिन्न रूप से संबद्ध रही थी। दिनकर स्वाधीनता संग्राम में नहीं कूदे थे, केवल कलम से ही उसमें सहयोग दे रहे थे।”[8]
दिनकर का पहला प्रकाशित काव्य-संग्रह ‘बारदोली विजय‘ है पर इसकी कोई भी प्रति कहीं उपलब्ध नहीं है। इसमें 10 कविताएँ संकलित हैं जिसमें दिनकर की राष्ट्रीयता भावना बीज रूप में विद्यमान है।[7] इसके भी पहले दिनकर ने ‘वीर बाला‘ और ‘मेघनाद वध‘ नामक काव्य लिखने आरंभ किए थे जो अधूरे रह गए और जिनकी पांडुलिपियों का कहीं पता नहीं है। प्रणभंग की रचना दिनकर ने मैट्रिक पास करने के बाद 1928 मे की। प्रणभंग जयद्रथ वध की तरह ही एक खंडकाव्य है जिसकी कथा महाभारत से ली गई है।[12] प्रणभंग में राष्ट्रीय भावना की अभिव्यक्ति का मार्ग अपनाया गया है। इसमें कहानी तो महाभारत से ली गई है, पर उसके माध्यम से यह कहा गया है कि गुलामी का अपमान भरा जीवन जीना कलंक है, इसलिए युद्ध से पहले जब युधिष्ठिर के मन में पाप-पुण्य, धर्म-अधर्म की दुविधा पैदा होती है तो अर्जुन, भीम एक साथ आक्रोश से फट पड़ते हैं -

‘**अपना अनादर देखकर भी आज हम जीते रहे,**
चुपचाप कायर से गरल के घूँट यदि पीते रहे,
तो वीर जीवन का कहाँ रहता हमारा तत्व है
इससे प्रकट होता यही हममें न अब पुरूशार्थ हैं।’

कवि के अनुसार यदि भारत गुलाम था, तो इसका कारण भारत से पुरूषार्थ का लोप था। कवि की दूसरी कृति रेणुका 1929-1925 के बीच लिखी गई। कुल 33 कविताओं का एक प्रतिनिधि संग्रह है। जिसका प्रकाशन 1935 में हुआ था। इसमें राष्ट्रीय कविताएँ संग्रहीत हैं। अतीत की गौरव गाथा और युगीन समस्याओं को उन्होंने पूरे तेज के साथ उजागर किया है इस काव्य की पहली कविता[6] मंगल आवाह्न में वह श्रृंगी फूंक कर सोए प्राणों को जगाना चाहता है -

‘‘**दो आदेश फूंक दूँ श्रृंगी**
उठे प्रभाती राग महान
तीनों काल ध्वनित हो स्वर में
जागें सुप्त भुवन के प्राण’’

कवि ऐसे स्वरों को गाना चाहता है। जिससे सारी सृष्टि सिहर उठे। कवि देश में व्याप्त अत्याचार, आडंबर और अहंकार को दूर करने के लिए शंकर के ताडंव तत्जन्य ध्वंस की कामना करता है -

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Peer Reviewed & Referred Journal |

| Volume 8, Issue 6, November 2021 |

"**विस्फारित लख काल नेत्र फिर, कांपे त्रस्त अतनु मन ही मन**
स्वर-स्वर भर संसार, ध्वनित हो नगपति का कैलाश शिखर
नाचो हे नटवर नाचो नटवर।"

हुंकार कवि की राश्ट्रीय रचनाओं का दूसरा संकलन है जिसका प्रकाषन 1928 में हुआ।हुंकार का कवि तूफान का आह्वान करता है। कवि स्वर्ग तक को जला देने की इच्छा व्यक्त करता है। 'आलोक धन्वा' काव्य में दिनकर क्रान्ति द्रष्टा के रूप में उपस्थित होते हैं। उनका रूप बड़ा दिव्य और ज्वलंत है -

"**ज्योतिर्धर कवि मैं ज्वलित और मंडल का**
मेरा शिखण्ड अरूणाभ किरीट अनल का
रथ में प्रकाश के अश्व जुते हैं मेरे
किरणों में उज्जवल गीत गुंथे है मेरे।"

हुंकार की कविताओं में सर्वत्र मानव पीड़ा विद्रोह की ऊर्जा और बलिदान का स्वर गूँज रहा है। इसका धरातल सामाजिक और राष्ट्रीय दोनो हैं। इसमें आने वाले संदर्भ दोनों के है कवि को सामाजिक विशमता का बड़ा स्पश्ट बोध है।[5] वे समझते है कि एक ओर किसान मजदूर हैं जो श्रम करके भी भूखे रहते है, दूसरी ओर परोपजीवी वर्ग है जो शोषणजन्य भोग विलास का सुख लूट रहा है। कवि ने शोषित वर्ग की पीड़ा और षोशक सभ्य क्रूरता के तनाव को उद्घाटित किया है-

"बोले कुछ मत क्षुधित, रोटियाँ खान-छीन खाएँ यदि कर से,
यही षान्ति, जब वे आएँ, हम निकल कर जाएँ चुपके से निज घर से।"

यह कहा जाए तो अतिश्योक्ति नहीं होगी कि चेतना आग और रक्त में निवास करती है। आग और रक्त का संग्रह उनकी काव्य चेतना का शुचितम तीर्थ है। वस्तुतः क्रांति के यही दो कगार है। बाह्य परिस्थितियाँ जब व्यक्ति को तिरस्कृत कर व्यक्ति के समस्त आतंरिक मूल्यों और अहं के उद्रेकों पर तिरस्कार-मयी व्यंग्य की तीखी बौछारें बन जाती है तब उस आग की सृष्टि होती है जो पहले अज्ञात ज्वालामुखी की भाँति मन से सुलगती रहती है। इस आग की संधि-धमनियों में दौड़ते हुए रक्त से होती है। रक्त खौल उठता है तथा यही रक्त सामूहिक क्रांति शक्ति संगठित करता है।[4]
राश्ट्रीय चेतना से परिपूर्ण अपनी रचनाओं में उन्होंने अपने विषाल देष के प्रति अनुराग का उच्च भाव राश्ट्र वंदना के रूप में मुखरित किया है जो कि निम्नांकित पंक्तियों में दृश्टव्य है-

"मेरे नगपति मेरे विषाल
साकार, दिव्य, गौरव, विराट
पौरूश के पूँजीभूत ज्वाल
मेरे जननी के हिम-किरीट
मेरे भारत के दिव्य भाल।"

कुरूक्षेत्र 1943 में प्रकाशित दिनकर का प्रथम प्रबंध काव्य है। विचारों की दृष्टि से ही कवि इसे प्रबंध काव्य मानता है। कवि कुरूक्षेत्र में राष्ट्रवादी एवं मानवतावादी दृष्टिकोण का ही विशेष समर्थन करता है।[3]दिनकर ने कुरूक्षेत्र में युद्ध के दो स्तर स्पश्ट किये है। बाह्य और आतंरिक। सनातन काल से चलने वाला देवासुर संग्राम आतंरिक युद्ध है, शेष सभी बाह्य दोनो के कारण समान और लगभग एक से है। जब तक मन में विकारी भाव रहेंगे तब तक समाज में युद्ध अवश्यंभावी है। कुरूक्षेत्र के छठे सर्ग में इसी अखण्ड शांति का संदेश कवि देता है। कवि का द्वंद है-

"**है बहुत देखा सुना मैंने मगर**
भेद खुल पाया धर्माधर्म का

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Peer Reviewed & Referred Journal |

| Volume 8, Issue 6, November 2021 |

आज तक ऐसा कि रेखा खींच कर
बाँट दूँ मैं पाप को औ पुण्य को।"

कुरूक्षेत्र अपने समय और समाज के प्रति जागृति का संदेश देने वाला समन्वय की भूमि पर स्थित काव्य है जहाँ युद्ध की अनिवार्यता, धर्म एवं शान्ति के मंगल की शुभकामना सन्निहित है।राष्ट्रकवि दिनकर की रचनाएँ राष्ट्रीय भावनाओं से ओत-प्रोत है। सामधेनी का प्रकाशन सन् 1946 में हुआ था। सन् 1941 से 1946 तक का काल देश में क्रांति का काल रहा है। समग्र देश का प्रतिशोध और प्रतिहिंसा का स्वर इसमें व्यक्त हुआ है। इस कृति का मूल स्वर क्रांति ही है।[2]

कवि पुरोधा बनकर क्रांति यज्ञ में बलिदानों की समिधा द्वारा अग्नि प्रज्जवलित करना चाहता है। सामधेनी की प्रथम कविता 'अचेतमृत-अचेतन' शिला मंगलाचरण रूप है। संग्रह के प्रथम सात गीत भाव प्रधान मुक्तक है, उनमें कवि के राष्ट्रीय भाव बड़ी प्रवणता से व्यक्त हुए हैं। कवि की दृढ़ता रागपूर्ण स्वर में व्यक्त हुई है। वह चाँद से बातें करते हुए समय उसे छिपी चेतावनी तो दे ही देता है-

"**स्वर्ग के सम्राट को जाकर खबर कर दे,**
रोज ही आकाष चढ़ते जा रहे हैं वे,
रोकिए जैसे बने इन स्वप्न बालों को
स्वर्ग की हो और बढ़ते आ रहे हैं वे।"

सामधेनी में कवि ने काव्य का विषय स्वर्ग की अपेक्षा धरती को चुना है। हुंकार का क्रान्तिकारी कवि स्थिर हो गया है।[1] जो युद्ध के संदर्भ में शांति की ओर विचारशील हो गया है। श्री विश्वनाथ सिंह के शब्द निष्कर्ष रूप में प्रस्तुत करना पर्याप्त है- ''दिनकर का यह काव्य संग्रह सामधेनी इस प्रकार यौवन के उद्दाम वेग की वाणी ही नहीं युग की वाणी भी है।"इतिहास के आँसू में कवि की दस प्रारंभिक ऐतिहासिक संग्रहीत हैं। इन कविताओं का रचनाकाल 1932 ई0 से 1948 ई0 तक है। ये सभी कविताएँ हमारे इतिहास से सम्बन्धित है, किन्तु कवि का राश्ट्रप्रेम और उसका ओजपूर्ण स्वर भी इनमें मुखरित है। इस काव्य संग्रह के अन्तर्गत कवि ने इतिहास के महान योद्धाओं की वीरता का गुणगान किया है। सामान्यतः कवि ने वर्तमान की समस्याओं के लिए अतीत का द्वार खटखटाया है। इस प्रक्रिया में उसके मानस में जिन विषेश व्यक्तियों के चित्र उभरते है उनमें गौतम बुद्ध और अषोक का स्थान प्रमुख है वर्तमान का निमंत्रण लेकर जब कवि अतीत के द्वार पर पहुँचता है तो उसे विषेशकर बलषाली मगध अथवा नालंदा और वैषाली की ही याद आती है कवि पाटलिपुत्र की गंगा से पूछता है कि वह कौन सा विषाद है कैसी व्यथा है जिस कारण आज उसके प्रवाह में षिथिलता दृश्टिगोचर हो रही है।[2] गंगा साक्षी है हमारे उस गौरवपूर्ण अतीत की जिसकी तूती संपूर्ण भारत में ही नहीं वरन् विदेषों में भी बोलती थी, गुप्त वंष की गरिमा, अषोक की करूणा, गौतम का षांति सन्देष, लिच्छिवियों की वैशाली सभी की स्मृति उसके मानस में अवष्य ही सुरक्षित होगी। 1935 के बाद की रचित ऐतिहासिक कविताओं में (जो यहाँ संगृहीत है) कवि केवल अतीत के गौरव की स्मृतिमात्र से संतुश्ट नहीं हो जाता, वरन् उनसे प्रेरणा लेकर भारतमाता की गुलामी की बेड़ी को काटने की प्रेरणा भी देता है। कवि का आह्वान है-

"**समय माँगता मूल्य मुक्ति का, देगा कौन माँस की बोटी**?
पर्वत पर आदर्श मिलेगा खाएँ चलो घास की रोटी।

परतंत्रता की बेड़ियों में जकड़ी हुई भारतभूमि से वह स्पष्ट शब्दों में पूछता है-

ओ भारत की भूमि वंदिनी! ओ जंजीरो वाली!
तेरी ही क्या कुक्षि फाड़कर जन्मी थी वैशाली?"

इतिहास के ये आँसू कवि को कितने प्रिय है हमारे लिए कितने अनमोल है इसका पता हमें इन रचनाओं को पढ़ने के बाद ही लगता है।राष्ट्रीय चेतना से ओत-प्रोत कवि का आगे काव्य संग्रह धूप और धुआँ का प्रकाषन 1953 में हुआ और इसमें कवि भी 1947 से 1951 तक

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Peer Reviewed & Referred Journal |

| Volume 8, Issue 6, November 2021 |

की रचनाओं का संग्रह है। समीक्ष्य काव्यकृति में स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चा के राश्ट्रीय जनजीवन की अभिव्यक्ति है कवि इसके नामकरण के बारे में लिखता है- ‘‘स्वराज्य से फूटने वाली आषा की धूप और उसके विरूद्ध जन्मे हुए असंतोश का धुआँ, ये दोनों ही इन रचनाओं में यथास्थान प्रतिबिंबित मिलेंगे।[2] अतएव जिनकी आँखे धूप और धुआँ दोनों को देख रही हैं। इसके लिए यह नाम कुछ निरर्थक नहीं होगा।’’संग्रह की रचनाओं में स्वतंत्रता, राश्ट्र हित की भावनाएँ तथा बापू और अन्य बलिदानियों के प्रति श्रद्धांजलि के भाव स्पश्ट हुए हैं। कवि को वर्तमान में जो तृशा दिखाई दे रही है उसे वाणी प्रदान की है। इस ग्रंथ के विशय में कवि ने स्वयं लिखा है-

‘‘स्वराज्य से फूटने वाली आषा की धूप और उसके विरूद्ध जन्मे हुये असन्तोश का धुआँ ये दोनो इन रचनाओं में यथा स्थान प्रतिबिम्बित मिलेगी। अतएव जिसकी आँखे धूप और धुआँ देख रही है उसके लिए यह नाम कुछ निरर्थक नहीं होगा।’’ धूप और धुआँ काव्य संग्रह की रचना स्वतंन्त्रता, राष्ट्र कल्याण, बलिदानियों पर श्रद्धा सेनानी की वीर भावना आदि ज्वलन्त विशयों से परिपूर्ण है। यथा-

“**माँ का अंचल है फटा हुआ, इन दो टुकड़ो को सीना है।**

देखे देता है कौन लहू, दे सकता कौन पसीना है।”

दिनकर की सोच राष्ट्रवादी सोच है और स्वदेश गौरव तथा स्वाभिमान उनमें कूट-कूटकर भरा है। कवि गाँधी जी की विचारधारा से प्रभावित होने के कारण उनका राष्ट्रवाद और अधिक पुष्ट तथा मजबूत बन गया है, किन्तु वे अहिंसा में विश्वास न करते हुए हिंसा को मूल में रखते हुए कहते हैं शांति और अहिंसा के सिद्धांतो को अपनाता है तो इससे उसकी कायरता ही उजागर होती है।[3]
परषुराम की प्रतीक्षा सन् 1962 में भारत-चीन की पृष्ठभूमि पर लिखी गई वीरता तथा ओज से परिपूर्ण कविताओं का संग्रह है उस समय कवि ने ओजमयी वाणी में इस आपद्धर्म को प्रकट किया है, जो किसी महान राष्ट्रवादी कवि रचनाकार के ही बूते की बात है। गाँधीवाद की उपासना में तत्कालीन सत्ता ने जिस मार्ग का आश्रय लिया कवि उससे संतुष्ट कैसे रह सकता है? अतः उसने यहाँ के वीरों को परशुराम के रूप में देखा तथा कवि ने गाँधीवादी अहिंसा को त्यागकर परशुराम[4] की तरह धर्म और जाति की रक्षा के लिए शस्त्र ग्रहण करने का अनुरोध किया-

“**चिंतको! चिंतना की तलवार गढ़ो रे!**
ऋशियों! कृषान, उद्दीपन मंत्र पढ़ो रे!
योगियों! जगो, जीवन की ओर बढ़ो रे
बंदूको पर अपना आलोक मढ़ो रे!”

कवि परषुराम की प्रतीक्षा काव्य संग्रह में चीन के विरूद्ध पूरे जोर से युद्ध का समर्थन करते है और स्वतंत्रता की रक्षा के लिए सभी कुछ न्यौछावर कर देने तथा अपने आपको बलिदान कर देने की भावना को प्रोत्साहित करते हैं-

“**दासत्व जहाँ है, वहीं स्तब्ध जीवन है।**
स्वातंत्रय निरंतर समर, सनातन रण है।
स्वातंत्रय समस्या नहीं आज या कल की
जागर्ति तीव्र वह घड़ी-घड़ी, पल-पल की।
कवि आगे यह आकांक्षा प्रकट करता है कि-
तिलक चढ़ा मत और हृदय में हूक दो,
दे सकते हो तो गोली बंदूक दो।”

कवि के अनुसार युद्ध के समय तटस्थ बने रहकर चुप बैठे रहना भी कायरता है। ऐसे तटस्थ और चालाक लोगों को फटकारता हुआ कवि कहता है-

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Peer Reviewed & Referred Journal |

| Volume 8, Issue 6, November 2021 |

"अब समझा, चुप्पी कदर्यता की वाणी है,
बहुत अधिक चातुर्य आपदाओं का घर है,
दोशी केवल वही नहीं, जो नयनहीन था,
उसका भी है पाप, आँख थी जिसे, किन्तु जो
बड़ी-बड़ी घड़ियों में मौन तटस्थ रहा है।"

दिनकर के काव्य का अवलोकन करने से यह ज्ञात होता है कि उनका काव्य राष्ट्रीय चेतनाओं से परिपूर्ण है कवि ने शुरूआत ही राष्ट्रीय चेतना से सम्बन्धित काव्य से की है तथा अलग-अलग संदर्भो में राष्ट्रीय चेतना को अपने काव्य में दर्शाया है। कवि दिनकर ने अपने युग का प्रतिनिधित्व अपने काव्य में किया है। दिनकर की सोच राष्ट्रवादी सोच है और स्वदेश गौरव तथा स्वाभिमान उनमें कूट-कूटकर भरा है, कवि गाँधीवादी विचारधारा से प्रभावित है किन्तु वे अहिंसा के बल पर नहीं बल्कि हिंसा के बल पर देष को आजाद कराना चाहते है। कवि स्वतंत्रता की रक्षा के लिए सभी कुछ न्यौछावर कर देने तथा स्वयं को भी बलिदान कर देने की भावना को प्रोत्साहित करते है।[5]

निष्कर्ष

रामधारी सिंह दिनकर के काव्य में राष्ट्रीय भावना का उद्घोष करने वाले दिनकर चिर युवा हैं, उनके काव्य में अपार उर्जा और प्रेरणा के ओजस्वी स्वर हैं।[5] वे लिखते हैं कि व्यास ने भीष्म का जो चरित्र अंकित किया है, वह अत्यंत उच्चकोटि का है। आश्चर्य है कि उतना बड़ा मनुष्य दुर्योधन का नमक खाया था। दिनकर मानते हैं कि वास्तविक कारण यह था कि वे वृद्ध हो गए थे और कोई भी क्रांतिकारी निर्णय वृद्ध मनुष्य नहीं ले सकता। इन बातों से युवावस्था में, उर्जा में और कर्मठता में दिनकर की गहरी आस्था प्रकट होती है। उद्यमिता में अटूट विश्वास प्रकट होता हैः-''प्रकृति नहीं डरकर झुकती है, कभी भाग्य के बल से, सदा हारती वह मनुष्य के उद्यम से श्रमबल से।''दृष्टि सभी में होती है, अंतरदृष्टि विरलों में। सवाल है कि वाह्य जगत को देखने वाली आंखें क्या कभी मन के दरवाजे पर दस्तक दे पाती हैं ? ''उर्वशी'' दिनकर की काव्य प्रतिभा की ऐसी ही फल सिद्धि है जो उनके मन में पहले से ही 'कहीं पड़ी हुई' थी। 'उर्वशी' वास्तव में ऐन्द्रिकता के सहारे अतीन्द्रिय जगत् के संस्पर्श का सफल प्रयास है, काम, अध्यात्म और प्रेम का साहित्यिक चित्रांकन है। मानव-मन की सहज भावनाओं को समेटने वाली उर्वशी को छेड़ना जितना सरल है, छोड़ना उतना ही कठिन। अपनी इस कृति में राग के अतुल्य उद्गाता दिनकर ने एक सहज मानवीय कथ्य को सरल किंतु सशक्त शिल्प में ऐसा आकार दिया है कि हृदय के तार झंकृत हुए बिना रह ही नहीं सकतेः-'' और वक्ष के कुसुम-कुंज, सुरभित विश्राम-भवन ये, जहां मृत्यु के पथिक ठहर कर श्रान्ति दूर करते हैं।''प्रेम क्या है ? क्या कोई शर्त, कोई आकांक्षा, कोई संतुष्टि, कोई तर्क, कोई भावना, किसी इच्छा की पूर्ति, कोई कामना या फिर वासना ? प्रेम के आयामों का क्षितिज कितना विस्तार ग्रहण कर सकता है ? क्या पुरूरवा का भौतिक प्रेम उसे आध्यात्मिक जगत में नहीं पहुंचाता ?[6] उसमें काम का कौन सा रूप विद्यमान था जिसने उसे ईश्वर की ओर उन्मुख किया ? काम जिसका अर्थ आज के भूमण्डलीकृत विश्व में 'सेक्स' तक सिमटकर रह गया है, की प्रेम में क्या भूमिका है ? क्या सेक्स जैसा शब्द काम के उचित महत्व को समग्रता में रूपायित कर पाता है ? और फिर काम, प्रेम के मार्ग में साधक है या बाधक ? या इन दोनों से परे, पलायनवाद का आराधक ? ''उर्वशी में ऐसे कितने सवाल हैं जो अनुत्तरित मौन के दायरे में भयंकर तूफान खड़ा करते हैं। दिनकर लिखते हैं कि उर्वशी चक्षु, रसना, घ्राण, त्वक् तथा स्त्रोत की कामनाओं का प्रतीक है, पुरूरवा रूप, रस, गंध, स्पर्श और शब्द से मिलनेवाले सुखों से उद्वेलित मनुष्य। पुरूरवा द्वन्द में है, क्योंकि द्वन्द में रहना मनुष्य का स्वभाव है। मनुष्य सुख की कामना भी करता है और उससे आगे निकलने का प्रयास भी। नारी नर को छूकर तृप्त नहीं होती, न नर नारी के आलिंगन से संतोष मानता है। कोई शक्ति है जो नारी को नर तथा नर को नारी से अलग रहने नहीं देती, और जब वे मिल जाते हैं, तब भी, उनके भीतर किसी ऐसी तृषा का संचार करती है, जिसकी तृप्ति शरीर के धरातल पर अनुपलब्ध है।नारी के भीतर एक और नारी है, जो अगोचर और इन्द्रियातीत है। इस नारी का संधान पुरूष तब पाता है, जब शरीर की धारा, उछालते-उछालते, उसे मन के समुद्र में फेंक देती है, जब दैहिक चेतना से परे, वह प्रेम की दुर्गम समाधि में पहुंचकर निस्पन्द हो जाता है।और पुरूष के भीतर भी एक और पुरूष है, जो शरीर के धरातल पर नहीं रहता, जिसमें मिलने की आकुलता में नारी अंग संज्ञा के पार पहुंचना चाहती है।परिरंभ पाश में बंधे हुए प्रेमी, परस्पर एक दूसरे का अतिक्रमण करके, किसी ऐसे लोक में पहुंचना चाहते हैं, जो किरणोज्जवल और वायवीय है। इन्द्रियों के मार्ग से अतीन्द्रिय धरातल का स्पर्श, यही प्रेम की आध्यात्मिक महिमा है।[7]

कवि और कविता का अपने समय के सभी सरोकारों से गहरा रिश्ता होता है। कवि की दृष्टि बहुत ही सूक्ष्म होती है। दिनकर के शब्दों में कवि सामाजिक जीव होता है। इसीलिए समर्थ रचनाकार सृजन की प्रक्रिया के दौरान काल के विशाल खण्डों में व्याप्त सार्थक चरित्रों को उठाता है। ऐसा करते हुए वह संकुचित दुनिया और सीमित बुद्धि जैसे अनेक कारकों के खिलाफ विद्रोह का झण्डा बुलंद करता है जो कला

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Peer Reviewed & Referred Journal |

| Volume 8, Issue 6, November 2021 |

की दुनिया को परंपराओं और रूढ़ियों में कैद किए रखना चाहते हैं। ''रश्मिरथी[8]'' के कर्ण चरित्र के उद्धार के लिए दिनकर द्वारा किया गया एक ऐसा ही महान प्रयास है, जहाँ सामाजिक विसगतियां भलीभांति रेखांकित कर ली गई हैं। दानवीर कर्ण का चरित्र निखरकर हमारे सामने पूरे औदात्य के साथ आता है:-''मित्रता बड़ा अनमोल रतन, कब इसे तोल सकता है धन ?'' दिनकर की ऐसी अनेक कविताएं हैं जो काव्य की सोद्देश्यता की अनुपम व्याख्याएं प्रस्तुत करती हैं, कला के मानवीय प्रयोजन को रेखांकित करती हैं और साहित्य की सार्थकता को सिद्ध करती हैं।किसी साहित्यकार के व्यक्तित्व की व्यंजना उसकी कृतियों से होती है। दिनकर की गद्य और पद्य मिलाकर कुल तकरीबन साठ कृतियां हैं। इसके अलावा ''दिनकर की डायरी'' भी दिनकर को समझने में काफी मदद करती है। उनकी डायरी इन्द्रधनुषी भावजगत के विविध आयामों से हमारा साक्षात्कार कराती है। पत्रों और डायरियों में दिनकर ने लिखा है कि जो पद हमें नहीं मिला है, अपने को उसके योग्य सिद्ध करना आसान है, किन्तु जिस पद पर हम हैं, उसकी योग्यता सिद्ध करना बड़ा कठिन काम है।.....छलपूर्ण प्रशंसा से उपयोगी आलोचना श्रेष्ठ है, मगर कम ही लेखक उसे पसन्द करते हैं।.....महापुरूषों की कीर्ति उन साधनों से नापी जानी चाहिए, जिनका प्रयोग कीर्ति पाने के लिए किया गया हो।.....जैसे-जैसे उम्र बढ़ती है, आदमीं के ज्ञान के साथ उसकी मूर्खता में भी वृद्धि होती है।.....विरह छोटे प्रेम को संकीर्ण और बड़े प्रेम को विस्तृत बनाता है। तूफान दीये को बुझा देता है किंतु होली की आग को खूब भड़काता है। दिनकर की लेखनी में ऐसी अनेक बातें हैं, जो साहित्यकारों समेत सभी के लिए उपयोगी और प्रांसगिक हैं। आगे भी रहेंगी।[9]

जनतंत्र का जनम में सिंहासन खाली करो, कि जनता आती है.....लिखकर कवि ने यही साबित किया है कि राजनीति और प्रशासन को जनता के हित के लिए काम करना चाहिए क्योंकि जनता, सचमुच ही बड़ी वेदना सहती है। फावड़े और हल को राजदंड बनाने का दिनकर का स्वप्न क्या हमें एक शांतिपूर्ण समाज-रचना की ओर अग्रसर नहीं करता। सिमरिया में जन्में दिनकर को खेतों और खलिहानों और किसानों से बहुत प्रेम रहा है। जिस तरह सामर सेट माम को भारत में और कुछ चाहे दिखा हो या न दिखा हो, यहां के किसान उन्हें जरूर दिखे थे,[10] उसी तरह दिनकर की दृष्टि भी कोमल संवेदनाओं से युक्त है। शायद इसीलिए पक्षियों और बादलों को भगवान के डाकिए मानने वाले दिनकर ने वैभव की दीवानी दिल्ली को कृषक-मेघ की रानी कहा है।दिनकर के पास सुस्पष्ट ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य का एक मजबूत हथौड़ा है, जिससे वे अतीत की चट्टान तोड़कर वर्तमान की वेगवान धारा निकालते है। समकालीन समस्याओं के निदान और मानवता के संकटों को सुलझाने के लिए उन्होंने कई बार इतिहास का सहारा लिया है। लेकिन उनका उद्देश्य क्या इतिहास को दुहराना भर ही था ? नहीं। उन्होंने अनेक स्थलों पर लिखा भी है कि उनके लक्ष्य उच्चतर रहे हैं। आखिर वर्तमान की उत्पति अतीत के गर्भ से ही होती है। अतीत की दुर्भेद्य किले की उंची-उंची चाहर दीवारें लांघकर ही समकालीनता की एक विधायक समझ बनायी जा सकती है। कच्ची पगडंडियों और पथरीली राहों पर चलने वाले साहसी पथिकों की यात्राएं दुर्गम, बीहड़ और पीड़ादायी तो होती है, लेकिन बिना प्रसव-पीड़ा के कोई जनम भी नहीं होता।''उर्वशी'' के लिए दिनकर ने यह पीड़ा लगातार आठ वर्षो तक झेली है।[10]

क्या कोई रचनाकार न्याय और अन्याय, सृजन और विनाश या स्वार्थ और परमार्थ जैसी विरोधी स्थितियों के बीच उदासीन बना रह सकता है ? तटस्थ बना रह सकता है ? तटस्थ रहने में सुरक्षा तो मिल सकती है, दायित्व-निर्वहन का तोष नहीं मिल सकता, समरभूमि में शहीद होने का आनंद नहीं मिल सकता। दिनकर ने तटस्थता को कोई मूल्य नहीं माना है। वे तटस्थता के बहेलिए हैं। [11]उन्होंने लिखा है:-

''समर शेष है, नहीं पाप का भागी केवल व्याध,

जो तटस्थ हैं, समय लिखेगा उनका भी अपराध।''

दिनकर जी ने स्वयं ''रश्मिरथि'' मे लिखा है: ''बाधाएं कब रोक सकी हैं, आगे बढ़ वालों को, विपदाएं कब मार सकी हैं, मरकर जीने वालों को।दिनकर जी की लेखनी गहन भावनाओं की प्रवाहमान धारा है। उसमें अगर उल्लास मौजूद है, तो यथार्थबोध की पीड़ा भी है। अगर हर्ष का प्रकाश है, तो विषाद का धुंॅधलका भी है। दृढ़ निश्चय का स्वच्छ आकाश है, तो द्वन्द का कुहासा भी। गर्जन है, तो वेदना की लकीरें भी। व्यवस्था के प्रति क्षोभ है, तो एक बेहतर विश्व की आशा भी। सौभाग्य की मंजूषा है, तो अपनों के कष्टों का दुर्भाग्य भी, मुसीबतों का अंबार भी, क्षुब्धता का पारावार भी और मौन का हाहाकार भी। शायद इसीलिए बहुरंगी विचारों के धनी दिनकर के बगीचे में सभी रंगों के फूल खिलते हैं। [12]उनके व्यक्तित्व का व्यापक धरातल और मस्तिष्क की उर्वर खाद ही वह आधार है, जहां से ये फूल खुश्बू और रंगत बटोरकर दुनिया को खूबसूरत बनाते हैं। उसमें ताजगी भरते हैं।यह दिनकर हैं जिन्हें हालात ने वेदनाओं से नहलाया है, आंसुओं से धोया है और कांटों से पिरोया है:-''जलन हूं, दर्द हूं, दिल की कसक हूं, किसी का हाय खोया प्यार हूं मैं।'' दिनकर की रचनाओं में संवेदनाओं के दर्शन बड़ी आसानी से किए जा सकते हैं:-'प्राणभंग' से लेकर 'हारे को हरिनाम' तक। उनमें वेदना की अनुभूति कर पाने की सामर्थ्य है। शायद इसीलिए उनका हृदय व्योम सा है क्योंकि वे जानते हैं:-''हृद्य छोटा हो, तो शोक वहां नहीं समायेगा। और दर्द दस्तक दिए बिना लौट जायेगा।''हृद्य की यह विशालता उन्हें राष्ट्रकवि ही नहीं, महान गद्यकार, चिंतक, संस्कृति-विद्वान और सबसे बढ़कर एक उम्दा इंसान बनाती है। ऐसा इंसान जिसे आमजन-जीवन की चिंता है, देश समाज, संस्कृति और विश्व की चिंता है। युद्ध जैसी वैश्विक समस्या को लेकर लिखी गई उनकी कृति ''कुरूक्षेत्र'' क्या यह साबित नहीं करती कि युद्ध में चाहे जो पक्ष जीते, हार तो मानवता को ही झेलनी पड़ती है ? मानवता की

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Peer Reviewed & Referred Journal |

| Volume 8, Issue 6, November 2021 |

रक्षा के लिए लेखनी उठाना क्या एक महान रचनात्मक कर्म नहीं ?[13] मानवता को हार से बचाने के लिए जब दिनकर अतीत की खिड़कियां खोलकर बाहर झाकते हैं और परदों की धूल झाड़ते हैं यह क्या ! वहां भी वही बेबसी। विनाश। चित्कार। धधकता अंबर। दूर तक चीखता सन्नाटाः-‘‘ वह कौन रोता है वहां, इतिहास के अध्याय पर !’’सत्ता-केन्द्र हमेशा जगमगाता है और जितना जगमगाता है उतना ही चकाचौंध का अंधेरा जन-मन में भरता जाता है, सत्ता-केन्द्र का वस्तु जगत हमारे भाव को अजब तरह से घूरने लगता है। हम इतिहास -केन्द्रों, पर पहुंचकर भी इतिहास पढ़ना भूल जाते हैं और यथार्थ पढ़ते हैं::-

‘‘तामस बढ़ता यदि गया धकेल प्रभा को, निर्बंध पंथ यदि नहीं मिला प्रतिभा को,

रिपु नहीं, यही अन्याय हमें मारेगा, अपने घर में ही फिर स्वदेश हरेगा।’’

एक लंबी काव्य यात्रा के बाद भी दिनकर को लगा कि जिंदगी की किताब तों खाली की खाली रह गई। शुक्र सिर्फ इतना कि एक सपाट, इकहरी और इकलौती जिंदगी उन्होंने नहीं जीः- ‘‘ शुक्र है कि इसी जीवन में /मैं अनेक बार जन्मा/और अनेक बार मरा हूं/।’’ जाहिर है कि दिनकर अंत तक कवि रहे नित्य नूतन चाहे उन्हें इसके लिए नए-नए जन्म ही क्यों न लेने पड़े हों।कुलमिलाकर कहा जा सकता है कि राष्ट्रकवि रामधारी सिंह दिनकर ने अंतरराष्ट्रीय और सबसे बढ़कर मानवीय भावनाओं एवं कृत्यों से ओत-प्रोत गद्य और पद्य लिखकर न केवल साहित्य को समृद्ध बनाया बल्कि अपने साहित्य के माध्यम से मानवता के प्रति मानव के कर्तव्य को भी चित्रित किया। परिणाम स्वरूप दिनकर ने छायावादोत्तर युग के साहित्येतिहास में एक गौरवपूर्व अध्याय जोड़ दिया। जब छायावादी कवि अलौकिक जगत् में विचरण कर रहे थे तो दिनकर लौकिक जगत की सच्चइयों से सराबोर साहित्य के सृजन में जुटे थे।

संदर्भ

1) 1. दिनकर एक शताब्दी, डॉ स्वयंवती शर्मा, डॉ, दिनेश कुमार.
2) 2. राष्ट्रकवि दिनकर एवं उनकी काव्य कला, शिखर चन्द्र जैन
3) 3. दिनकर का वीरकाव्य, धर्मपाल सिंह आर्य
4) 4. दिनकर व्यक्तित्व और रचना के नये आयाम, डॉ गोपाल राय सत्यकाम
5) 5. दिनकर की काव्यभाषा, डॉ यतीन्द्र तिवारी
6) 6. हिन्दी साहित्य का इतिहास, डॉ. नागेन्द्र
7) जीवनी एवं रचनाएँ Archived 2006-07-13 at the Wayback Machine अनुभूति पर.
8) ↑ "साहित्य अकादमी पुरस्कार". मूल से 7 अगस्त 2016 को पुरालेखित. अभिगमन तिथि 8 फ़रवरी 2009.
9) ↑ Dāmodara, Śrīhari (1975). Ādhunika Hindī kavitā meṃ rāshṭrīya bhāvanā, san 1857-1947. Bhārata Buka Ḍipo. पृ॰ 472. उन्हें युग चारण की संज्ञा देकर हिन्दी के आलोचकों ने उनके काव्य की मूल भूमि को राष्ट्रीयता माना है।
10) ↑ Sahitya Akademi Awards 1955-2007 Archived 2007-07-04 at the Wayback Machine साहित्य अकादमी पुरस्कारों का आधिकारिक जाल स्थल
11) ↑ "Top 100 famous epics of the World" [विश्व के १०० सर्वश्रेष्ठ प्रबन्ध काव्य] (अंग्रेज़ी में). मूल से 14 दिसंबर 2013 को पुरालेखित. अभिगमन तिथि 9 दिसम्बर 2013.
12) ↑ वो थे दिनकर, जिन्होंने संसद में नेहरू के खिलाफ पढ़ी थी कविता
13) ↑ नई दुनिया, सम्पादकीय पृष्ठ, दिनांक ११ फरवरी, २०२०